The Academia
(A Multidisciplinary Peer-Reviewed Research Journal)
Volume: 03, Issue: II, Pages: 101-106, Year: 2025

ISSN- 2583-8830

बिहार में राज्य राजनीति की गतिशीलता: पहचान बनाम विकास

राम शंकर[1], **डॉ. देवेन्द्र प्रताप तिवारी**[2]

1 शोध छात्र, विश्वविद्यालय राजनीति विज्ञान विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।

2 सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग, बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।

Received: 23 Oct. 2025 **Accepted: 24 Dec. 2025** **Published: 30 Dec. 2025**

शोध सारांश

बिहार की राजनीति भारतीय संघीय लोकतंत्र का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है, जहाँ पहचान (जाति, धर्म, भाषा) और विकास (आर्थिक वृद्धि, बुनियादी ढांचा, शिक्षा, स्वास्थ्य) के बीच संतुलन लगातार बदलता रहता है। स्वतंत्रता के बाद से यहाँ की राजनीति लंबे समय तक जातिगत पहचान के इर्द-गिर्द घूमती रही, किंतु 1990 के दशक के बाद विकास की राजनीति एक नई धारा के रूप में उभरी। बिहार भारत का तीसरा सबसे अधिक जनसंख्या वाला राज्य है और इसका राजनीतिक इतिहास विविधताओं से भरा है। यह राज्य लंबे समय तक "जाति आधारित राजनीति" के लिए जाना गया, जहाँ यादव, कुर्मी, भूमिहार, ब्राह्मण, दलित, मुसलमान आदि जाति-समुदायों की पहचान चुनावों का निर्णायक कारक रही। परंतु 2005 के बाद से विकास आधारित राजनीति ने नई दिशा प्रदान की, जिसमें "सुशासन" और "विकास" की अवधारणा को राजनीतिक विमर्श के केंद्र में लाया गया। यह शोध पत्र बिहार की राजनीति की इस गतिशीलता का विश्लेषण करता है और यह दर्शाता है कि किस प्रकार पहचान और विकास दोनों ही चुनावी व्यवहार, राजनीतिक विमर्श और शासन नीतियों को प्रभावित करते हैं। इस शोध पत्र में बिहार राज्य की राजनीति के संदर्भ में पहचान एवं विकास की राजनीति की समीक्षा की गयी है। यह अध्ययन ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है।

बीज शब्द - पहचान की राजनीति, विकास, जाति, धर्म, सुशासन, वोट बैंक की राजनीति, सामाजिक न्याय।।

1. प्रस्तावना

बिहार भारतीय राजनीति का वह क्षेत्र है जिसने स्वतंत्रता संग्राम से लेकर आज़ादी के बाद के दशकों तक राष्ट्रीय राजनीति को निर्णायक रूप से प्रभावित किया है। यह राज्य न केवल नेतृत्व की दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा है, बल्कि यहाँ की सामाजिक-सांस्कृतिक विविधता और जातिगत संरचना ने भारतीय लोकतंत्र को समझने के लिए विशेष दृष्टिकोण प्रदान किया है। बिहार की राजनीति का अध्ययन हमें यह समझने में मदद करता है कि किस प्रकार पहचान (identity politics) और विकास (development politics) के बीच एक निरंतर संघर्ष और संतुलन चलता है।

स्वतंत्रता के बाद पहले दो दशकों तक बिहार की राजनीति पर कांग्रेस का वर्चस्व रहा, किंतु 1960 के दशक के अंत में जातिगत असमानताओं और सामाजिक न्याय के आंदोलनों ने नई राजनीति को जन्म दिया। मंडल आयोग की सिफारिशें लागू होने के बाद 1990 के दशक में बिहार की राजनीति ने जातीय पहचान को केंद्र में रखकर चुनावी समीकरण गढ़े। लालू प्रसाद यादव का "एम वाई (मुस्लिम-यादव) समीकरण" इसी पहचान आधारित राजनीति का सर्वाधिक सफल प्रयोग था। इस दौर में राजनीतिक विमर्श का केंद्र "सामाजिक न्याय बनाम उच्च जाति वर्चस्व" था।

हालाँकि 2005 के बाद जब नीतीश कुमार सत्ता में आए, तब उन्होंने राजनीति को एक नए विमर्श की ओर मोड़ने का प्रयास किया। उन्होंने "सुशासन" और "विकास" को प्राथमिकता देते हुए कानून-व्यवस्था, सड़क, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी मूलभूत सुविधाओं पर ध्यान केंद्रित किया। इस प्रकार बिहार की राजनीति ने पहली बार जातिगत पहचान से आगे बढ़कर विकास को एक केंद्रीय एजेंडा के रूप में प्रस्तुत किया। बिहार में यह द्वंद्व निरंतर जारी है—एक ओर जातिगत और धार्मिक पहचान वोट बैंक की राजनीति को परिभाषित करती है, तो दूसरी ओर विकास आधारित विमर्श जनता की आकांक्षाओं को दिशा देता है।

2. बिहार की राजनीति में पहचान की भूमिका

बिहार की राजनीति में पहचान का प्रश्न एक लंबे समय तक केन्द्रीय रहा है। इस राज्य की सामाजिक संरचना गहरी जातीय और धार्मिक विविधताओं से निर्मित है, जिसने राजनीति को लंबे समय तक केवल "वोट बैंक समीकरण" तक सीमित कर दिया। भारतीय लोकतंत्र में जाति एक सामाजिक और राजनीतिक पहचान दोनों है, लेकिन बिहार में यह पहचान राजनीतिक व्यवहार को सीधे प्रभावित करती रही है।

The Academia
(A Multidisciplinary Peer-Reviewed Research Journal)
Volume: 03, Issue: II, Pages: 101-106, Year: 2025
ISSN- 2583-8830

2.1 जातिगत समीकरण और सामाजिक न्याय

बिहार की राजनीति में जातिगत पहचान सबसे महत्वपूर्ण तत्व रहा है। मंडल आयोग की सिफारिशें लागू होने के बाद 1990 का दशक एक नए युग की शुरुआत का प्रतीक बना। लालू प्रसाद यादव ने "सामाजिक न्याय" को अपने राजनीतिक एजेंडे का आधार बनाते हुए पिछड़ी और अति-पिछड़ी जातियों के साथ-साथ दलितों को संगठित किया। उनका प्रसिद्ध "एम वाई (मुस्लिम-यादव) समीकरण" जातिगत और धार्मिक पहचान की राजनीति का सफलतम उदाहरण माना जाता है। इस समीकरण ने लंबे समय तक बिहार की राजनीति पर राजद का वर्चस्व स्थापित किया।

लालू प्रसाद यादव ने नारा दिया – "भूरा बाल साफ करो" (भूमिहार, राजपूत, ब्राह्मण और लाला यानी वैश्य), जिसने स्पष्ट संकेत दिया कि उनका राजनीतिक संघर्ष उच्च जातियों के प्रभुत्व को चुनौती देने का था। इससे यह साबित हुआ कि बिहार की राजनीति में जातिगत पहचान केवल वोटों का साधन ही नहीं, बल्कि सामाजिक संघर्ष और सत्ता संरचना को पुनर्गठित करने का भी उपकरण था।

2.2 धार्मिक पहचान और राजनीतिक समीकरण

धार्मिक पहचान, विशेषकर मुसलमानों का वोट बैंक, बिहार की राजनीति में निर्णायक भूमिका निभाता रहा है। मुसलमानों की जनसंख्या राज्य में लगभग 17 प्रतिशत है और यह समुदाय चुनावों में एकजुट होकर वोट करता है। लालू प्रसाद यादव ने "धर्मनिरपेक्षता" और "सांप्रदायिक शक्तियों के खिलाफ लड़ाई" का संदेश देकर मुस्लिम मतदाताओं को अपने साथ जोड़ा। यही कारण था कि लंबे समय तक मुस्लिम-यादव गठबंधन ने राजद को अपराजेय शक्ति बनाए रखा। बाद में नीतीश कुमार ने भी मुसलमानों को साधने की कोशिश की और 2005 के बाद उन्होंने अपनी सरकार में अल्पसंख्यकों के लिए कई योजनाएँ लागू कीं, जैसे अंजुमन मदरसा शिक्षकों के लिए वेतन, अल्पसंख्यक छात्रों को छात्रवृत्ति आदि। इससे यह स्पष्ट हुआ कि धार्मिक पहचान को नज़रअंदाज़ करके कोई भी दल बिहार में दीर्घकालीन सत्ता नहीं पा सकता।

2.3 नेतृत्व और करिश्माई राजनीति

बिहार की राजनीति में जातीय और धार्मिक पहचान के साथ-साथ नेतृत्व का करिश्मा भी अहम कारक रहा है। लालू प्रसाद यादव का करिश्मा केवल एक जाति नेता तक सीमित नहीं था, बल्कि वे "गरीबों के मसीहा" और "सामाजिक न्याय के पैरोकार" के रूप में अपनी पहचान बना पाए। दूसरी ओर नीतीश कुमार ने स्वयं को "विकास पुरुष" और "सुशासन बाबू" के रूप में प्रस्तुत किया, किंतु इसके बावजूद उन्होंने जातीय संतुलन बनाए रखने की रणनीति जारी रखी। नीतीश कुमार के शासन में कुर्मी जाति (उनकी अपनी जातीय पृष्ठभूमि) का प्रभाव दिखा, किंतु उन्होंने यादवों और मुसलमानों के खिलाफ जातीय टकराव की राजनीति से बचते हुए सामाजिक संतुलन का प्रयास किया। इस प्रकार नेतृत्व ने पहचान की राजनीति को न केवल परिभाषित किया बल्कि उसे नियंत्रित और संतुलित करने का भी प्रयास किया।

2.4 पहचान और चुनावी व्यवहार

चुनावी व्यवहार में यह देखा गया है कि बिहार में मतदाता अपने जातीय और धार्मिक आधार पर मतदान करने की प्रवृत्ति रखते हैं। उदाहरण के लिए, यादव प्रायः राजद के साथ, कुर्मी जदयू के साथ और भूमिहार-वैश्य वर्ग भाजपा के साथ जुड़े रहे हैं। यही कारण है कि राजनीतिक दल उम्मीदवार चयन, प्रचार रणनीति और गठबंधन बनाते समय सबसे पहले जातीय और धार्मिक समीकरणों को ध्यान में रखते हैं। यहाँ तक कि जब विकास आधारित राजनीति को उभारने की कोशिश की गई, तब भी दलों ने उम्मीदवार चयन और संगठनात्मक संरचना में जातीय संतुलन बनाए रखा। इस प्रकार कहा जा सकता है कि बिहार की राजनीति में पहचान केवल "पृष्ठभूमि" नहीं बल्कि "मंच का केंद्र" रही है।

बिहार की राजनीति में पहचान की भूमिका बहुस्तरीय है। जाति, धर्म और नेतृत्व की व्यक्तिगत पहचान ने न केवल चुनावी परिणाम तय किए बल्कि नीति निर्माण और शासन प्रणाली को भी गहराई से प्रभावित किया। मंडल राजनीति से लेकर आज तक यह साफ दिखाई देता है कि बिहार की राजनीति में पहचान की राजनीति केवल सत्ता प्राप्त करने का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना के पुनर्गठन का साधन भी रही है।

3. विकास आधारित राजनीति का उदय

बिहार की राजनीति लंबे समय तक जातिगत पहचान और सामाजिक न्याय के इर्द-गिर्द घूमती रही, किंतु 2005 के बाद इसमें एक महत्वपूर्ण परिवर्तन देखा गया। जब नीतीश कुमार ने सत्ता संभाली, तब उन्होंने राजनीतिक विमर्श को "जाति आधारित पहचान" से हटाकर "विकास और सुशासन" की ओर मोड़ने का प्रयास किया। यह बदलाव केवल सत्ता परिवर्तन भर नहीं था, बल्कि बिहार की राजनीति के स्वरूप में एक नए युग की शुरुआत थी। 2005 के विधानसभा चुनावों में नीतीश कुमार ने "सुशासन" को अपना मुख्य चुनावी एजेंडा बनाया। इस नारे के पीछे उनकी रणनीति थी कि जनता को यह विश्वास दिलाया जाए कि बिहार में केवल जातिगत राजनीति ही नहीं, बल्कि कानून-व्यवस्था, सड़क, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे बुनियादी मुद्दे भी प्राथमिक हो सकते हैं। अपराध और अपहरण उद्योग से बदनाम बिहार में पुलिस सुधार और त्वरित न्यायालयों की स्थापना की गई। सड़क निर्माण और बिजली आपूर्ति में उल्लेखनीय सुधार लाए गए, जिससे आम जनता

The Academia
(A Multidisciplinary Peer-Reviewed Research Journal)
Volume: 03, Issue: II, Pages: 101-106, Year: 2025
ISSN- 2583-8830

को सीधे राहत मिली। यहाँ से यह स्पष्ट हुआ कि विकास आधारित राजनीति जनता के लिए सीधे अनुभव करने योग्य है और यह उनकी दैनिक समस्याओं से गहराई से जुड़ी हुई है।

नीतीश कुमार के शासन की एक बड़ी विशेषता शिक्षा और महिला सशक्तिकरण पर दिया गया जोर था। मुख्यमंत्री बालिका साइकिल योजना (2006) ने ग्रामीण क्षेत्रों की लड़कियों को स्कूल पहुँचने में सुविधा दी और यह योजना राष्ट्रीय स्तर पर चर्चित हुई। पढ़ी बेटी, बढ़ी बेटी योजना और उच्च शिक्षा में लड़कियों के लिए आरक्षण जैसी नीतियों ने शिक्षा में लैंगिक समानता को बढ़ावा दिया। इन पहलों से यह संदेश गया कि राजनीति केवल जातीय पहचान पर आधारित न होकर विकास और सामाजिक परिवर्तन का साधन भी बन सकती है।

बिहार की अर्थव्यवस्था लंबे समय तक पिछड़ेपन और प्रवासी मजदूरी पर निर्भर रही। नीतीश कुमार ने औद्योगिक निवेश को बढ़ाने और बुनियादी ढांचे को सुदृढ़ करने पर जोर दिया। सड़कों और पुलों के निर्माण से गाँव-शहर के बीच संपर्क सुधरा। कृषि रोडमैप और ग्रामीण विकास योजनाओं ने किसानों को समर्थन देने का प्रयास किया। हालाँकि, बड़े उद्योगों का पर्याप्त निवेश अभी भी नहीं हो सका और प्रवासी मजदूरों की समस्या जस की तस बनी रही।

विकास आधारित राजनीति का सबसे बड़ा प्रभाव यह रहा कि बिहार में चुनावी विमर्श धीरे-धीरे बदलने लगा। पहले जहाँ जाति और धर्म ही मुख्य मुद्दे हुआ करते थे, वहीं 2010 और 2015 के चुनावों में "सड़क, बिजली, रोजगार, शिक्षा और स्वास्थ्य" भी बहस का हिस्सा बने। युवाओं और शहरी मतदाताओं ने विकास को अपनी प्राथमिकता बनाया और सोशल मीडिया पर भी इस विमर्श ने जगह बनाई। हालाँकि, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि विकास की राजनीति पूरी तरह पहचान की राजनीति को प्रतिस्थापित नहीं कर पाई, बल्कि दोनों के बीच एक जटिल संतुलन उभरा।

4. विकास राजनीति की सीमाएँ

भले ही विकास को राजनीतिक विमर्श का केंद्रीय मुद्दा बनाया गया, लेकिन इसकी कुछ सीमाएँ भी सामने आईं। राज्य की प्रति व्यक्ति आय और औद्योगिक विकास अभी भी राष्ट्रीय औसत से पीछे है। प्रवासी मजदूरी, रोजगार की कमी और स्वास्थ्य सेवाओं की बदहाल स्थिति जैसे मुद्दों ने यह दिखाया कि केवल सड़क और बिजली के विकास से व्यापक आर्थिक परिवर्तन संभव नहीं। इससे यह स्पष्ट हुआ कि बिहार की राजनीति में विकास आधारित विमर्श को जन समर्थन तो मिला, किंतु पहचान आधारित राजनीति को पूरी तरह विस्थापित करना संभव नहीं हुआ।

बिहार में विकास आधारित राजनीति का उदय राज्य की राजनीति के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ था। इसने यह दिखाया कि जनता केवल पहचान और जाति के नाम पर वोट नहीं करती, बल्कि उन्हें सुशासन और विकास के ठोस अनुभव भी चाहिए। नीतीश कुमार ने इस एजेंडे को केंद्र में लाकर राजनीति में एक नई धारा शुरू की, जिसने बिहार को "विकास" की दिशा में आगे बढ़ाया। फिर भी, यह सत्य है कि विकास की राजनीति जातिगत और धार्मिक पहचान से अलग-थलग नहीं रह पाई, बल्कि दोनों का सह-अस्तित्व जारी रहा।

5. पहचान बनाम विकास – संघर्ष और संतुलन

बिहार की राजनीति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यहाँ पहचान आधारित राजनीति (जाति और धर्म) और विकास आधारित राजनीति (सुशासन और आर्थिक सुधार) के बीच एक निरंतर संघर्ष और संतुलन बना रहता है। चुनावी परिदृश्य, नीति-निर्माण और जनमत तीनों स्तरों पर यह द्वंद्व साफ दिखाई देता है। यह द्वंद्व केवल सत्ता हासिल करने का माध्यम नहीं, बल्कि जनता की आकांक्षाओं और उनके सामाजिक-सांस्कृतिक अनुभवों का भी प्रतिबिंब है।

5.1 जाति बनाम विकास

1990 के दशक में मंडल आयोग की राजनीति ने स्पष्ट कर दिया था कि बिहार में जातीय पहचान सत्ता का सबसे बड़ा साधन है। यादव, कुर्मी, कोइरी और दलित समुदाय सामाजिक न्याय के नारे के तहत संगठित होकर राजद और जदयू जैसे दलों के आधार बने। परंतु जब नीतीश कुमार ने 2005 के बाद विकास को राजनीतिक विमर्श का केंद्र बनाया, तब यह संघर्ष और गहरा हुआ। उदाहरण के लिए, 2010 के विधानसभा चुनाव में नीतीश कुमार ने विकास और सुशासन को प्रमुख मुद्दा बनाया, लेकिन उम्मीदवार चयन में जातीय समीकरणों को ध्यान में रखना भी उनकी मजबूरी रही। यह इस तथ्य को रेखांकित करता है कि विकास को केंद्र में लाने की कोशिश के बावजूद जातिगत पहचान चुनावी राजनीति में निर्णायक बनी रही।

5.2 धार्मिक पहचान और विकास

मुसलमानों की राजनीति भी इसी संघर्ष का हिस्सा रही है। लालू प्रसाद यादव ने मुस्लिम-यादव समीकरण से पहचान की राजनीति को मज़बूत किया, जबकि नीतीश कुमार ने अल्पसंख्यकों को विकास योजनाओं के माध्यम से साधने की कोशिश की। लेकिन हर चुनाव के समय यह प्रश्न उठता रहा कि क्या अल्पसंख्यक मतदाता केवल विकास के आधार पर वोट करेंगे, या उनकी धार्मिक पहचान अधिक प्रभावी होगी।

The Academia
(A Multidisciplinary Peer-Reviewed Research Journal)
Volume: 03, Issue: II, Pages: 101-106, Year: 2025
ISSN- 2583-8830

बिहार की राजनीति में दलों ने यह समझ लिया है कि केवल पहचान या केवल विकास के सहारे लंबे समय तक सत्ता में बने रहना संभव नहीं। इसलिए एक संतुलन बनाने की रणनीति अपनाई गई। जदयू-भाजपा गठबंधन (2005–2013) ने विकास और सामाजिक न्याय दोनों को साधने का प्रयास किया। भाजपा का उच्च जातियों में प्रभाव और नीतीश कुमार का पिछड़ी जातियों पर पकड़ मिलकर एक संतुलनकारी समीकरण बना। राजद ने भी हाल के वर्षों में अपनी राजनीति को बदलते हुए रोजगार, शिक्षा और विकास के मुद्दों को जातीय पहचान के साथ जोड़ने की रणनीति अपनाई। तेजस्वी यादव ने 2020 के विधानसभा चुनाव में "10 लाख नौकरियाँ" देने का वादा करके विकास विमर्श को अपनी राजनीति में शामिल किया।

बिहार की जनता का मनोविज्ञान भी इस संघर्ष और संतुलन की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ग्रामीण और गरीब वर्ग अब भी जातीय पहचान को प्राथमिक मानते हैं क्योंकि इससे उन्हें राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अनुभव होता है। दूसरी ओर शहरी और युवा मतदाता शिक्षा, रोजगार और सुशासन की अपेक्षा रखते हैं। इसलिए चुनावों में दोनों तरह की अपेक्षाएँ मौजूद रहती हैं और राजनीतिक दलों को इनका संतुलन साधना पड़ता है।

6. संघर्ष और संतुलन का व्यावहारिक परिणाम

इस संघर्ष और संतुलन का व्यावहारिक परिणाम यह है कि बिहार की राजनीति में कभी भी कोई एक विमर्श पूरी तरह हावी नहीं हो पाता।

- 1990 का दशक पहचान की राजनीति का दशक था।
- 2005–2010 विकास आधारित राजनीति का उदय हुआ।
- 2015 और 2020 में पहचान और विकास दोनों का मिश्रण सामने आया, जहाँ गठबंधनों और उम्मीदवार चयन में जाति अहम रही, लेकिन प्रचार और नीतियों में विकास भी केंद्रीय मुद्दा बना।

बिहार की राजनीति में पहचान और विकास के बीच संघर्ष अवश्य है, लेकिन यह संघर्ष पूर्ण नहीं बल्कि आंशिक है। दोनों एक-दूसरे को पूरक रूप में भी काम करते हैं। दल चुनाव जीतने के लिए जातिगत समीकरण साधते हैं, परंतु सत्ता में आने के बाद जनता की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए विकास को प्राथमिकता देनी पड़ती है। इसी द्वंद्व ने बिहार की राजनीति को अद्वितीय और बहुस्तरीय बना दिया है।

7. बिहार की राजनीति का भविष्य

बिहार की राजनीति का भविष्य पहचान और विकास की दोहरी धुरी पर टिका हुआ है। एक ओर जातिगत पहचान, धार्मिक आधार और सामाजिक समीकरण राजनीति की जड़ों में गहराई से मौजूद हैं, वहीं दूसरी ओर विकास, सुशासन और रोजगार जैसे मुद्दे धीरे-धीरे जनमत के निर्णायक तत्व बनते जा रहे हैं। यह द्वंद्व केवल बिहार तक सीमित नहीं है, बल्कि पूरे भारतीय लोकतंत्र में यह बहस व्यापक रूप से देखी जा सकती है। किंतु बिहार के सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य में इसका महत्व और भी अधिक है क्योंकि यह राज्य ऐतिहासिक रूप से जातिगत राजनीति का गढ़ रहा है।

भविष्य की राजनीति का पहला आयाम यह है कि पहचान की राजनीति का प्रभाव पूरी तरह समाप्त नहीं होगा। जाति और समुदाय आधारित राजनीति बिहार की सामाजिक संरचना का अभिन्न हिस्सा है और यह माना जा सकता है कि आगामी चुनावों में भी यह कारक एक सीमा तक निर्णायक भूमिका निभाएंगे। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में, जहां सामाजिक संबंध और जातीय समीकरण अभी भी राजनीतिक निर्णयों को प्रभावित करते हैं, वहां पहचान की राजनीति का प्रभाव लंबे समय तक बना रह सकता है।

दूसरा आयाम यह है कि विकास आधारित राजनीति लगातार मजबूत होती जाएगी। युवा मतदाताओं की बढ़ती संख्या, शिक्षा का प्रसार और मीडिया का प्रभाव यह सुनिश्चित करता है कि राजनीति केवल पहचान तक सीमित न रहे। बिहार से बड़ी संख्या में युवा प्रवासी मजदूर अन्य राज्यों और देशों में जाते हैं और वहां विकास के मॉडल को देखकर अपने राज्य में भी वैसा ही परिवर्तन चाहते हैं। ऐसे में रोजगार सृजन, आधारभूत ढांचे का विकास, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता, ये सभी मुद्दे भविष्य की राजनीति के केंद्र में होंगे।

तीसरा महत्वपूर्ण पहलू गठबंधन राजनीति का है। बिहार की राजनीति का भविष्य केवल पार्टियों की वैचारिक स्थिति से तय नहीं होगा, बल्कि उनके बीच बनने वाले गठबंधनों पर भी निर्भर करेगा। पहचान और विकास के एजेंडे को किस प्रकार से दल अपने-अपने चुनावी घोषणापत्र में संतुलित करते हैं, यह उनके चुनावी प्रदर्शन को प्रभावित करेगा। पिछले वर्षों में देखा गया है कि जातीय आधार पर बने गठबंधन तभी स्थायी होते हैं जब उनके साथ विकास का एजेंडा भी जोड़ा जाए।

इसके अतिरिक्त, बिहार की राजनीति में तकनीक और सोशल मीडिया का भी बड़ा योगदान रहेगा। आज के दौर में चुनावी विमर्श केवल सभाओं और गांव-गांव तक जाने तक सीमित नहीं है, बल्कि डिजिटल माध्यमों पर भी आकार लेता है। इससे पहचान आधारित राजनीति को चुनौती मिल सकती है क्योंकि

The Academia
(A Multidisciplinary Peer-Reviewed Research Journal)
Volume: 03, Issue: II, Pages: 101-106, Year: 2025
ISSN- 2583-8830

डिजिटल स्पेस में विकास और सुशासन पर अधिक फोकस होता है। इसके साथ ही, युवा वर्ग इंटरनेट के माध्यम से अपनी अपेक्षाओं को व्यक्त करता है, जो राजनीतिक दलों को नई रणनीतियां बनाने के लिए मजबूर करता है।

भविष्य की राजनीति का एक अन्य पहलू यह भी होगा कि बिहार में शासन और नीतियों की स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए पहचान और विकास दोनों का संतुलित मेल आवश्यक होगा। केवल जातिगत पहचान पर आधारित राजनीति न तो राज्य को आगे बढ़ा सकती है और न ही युवाओं की आकांक्षाओं को पूरा कर सकती है। वहीं केवल विकास की राजनीति भी संभवतः समाज की जमीनी हकीकत को नज़रअंदाज़ कर सकती है। इसलिए राजनीतिक दलों को दोनों आयामों का संयोजन करना होगा। यही संयोजन बिहार को राजनीतिक अस्थिरता से निकालकर विकास और सामाजिक न्याय दोनों की ओर अग्रसर कर सकता है।

अंततः कहा जा सकता है कि बिहार की राजनीति का भविष्य पहचान और विकास के बीच संतुलन खोजने में निहित है। जातीय समीकरण और सामाजिक पहचान राजनीति की जड़ों में बने रहेंगे, किंतु विकास और सुशासन की मांग धीरे-धीरे राजनीति का मुख्य चेहरा बन जाएगी। यदि राजनीतिक दल इस चुनौती को समझकर अपने एजेंडे में सामाजिक न्याय और विकास दोनों को स्थान देते हैं, तो बिहार एक नए राजनीतिक युग में प्रवेश कर सकता है, जो न केवल राज्य बल्कि पूरे देश के लिए एक अनुकरणीय उदाहरण हो सकता है।

8. निष्कर्ष

बिहार की राजनीति की गतिशीलता को समझने के लिए पहचान और विकास—इन दोनों ही आयामों को समान रूप से देखना आवश्यक है। इतिहास साक्षी है कि राज्य की राजनीति लंबे समय तक जातीय और सामुदायिक पहचानों पर आधारित रही है। सामाजिक न्याय की राजनीति ने हाशिए के वर्गों को आवाज़ दी और सत्ता में प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया। इसने लोकतंत्र को गहराई दी, परंतु इसके साथ-साथ जातिगत ध्रुवीकरण और राजनीतिक अस्थिरता भी सामने आई।

दूसरी ओर, विकास आधारित राजनीति का उदय बिहार में एक नए युग की शुरुआत का संकेत है। रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य और आधारभूत संरचना जैसे मुद्दे अब जनता की प्राथमिकताओं में शामिल हो चुके हैं। प्रवासी मजदूरों और युवा वर्ग की आकांक्षाओं ने राजनीतिक दलों को बाध्य किया है कि वे केवल पहचान पर नहीं, बल्कि ठोस विकास योजनाओं पर ध्यान केंद्रित करें।

बिहार की राजनीति का वर्तमान परिदृश्य इन दोनों आयामों के संघर्ष और संतुलन को दर्शाता है। न तो पहचान आधारित राजनीति पूरी तरह अप्रासंगिक हो सकती है और न ही विकास की राजनीति अकेले निर्णायक बन सकती है। राज्य की सामाजिक संरचना और ऐतिहासिक अनुभव यह बताते हैं कि आने वाले वर्षों में एक संतुलित राजनीतिक मॉडल उभर सकता है जिसमें सामाजिक न्याय और विकास—दोनों एक-दूसरे के पूरक बनें।

भविष्य में बिहार की राजनीति का मार्ग इसी संतुलन पर निर्भर करेगा। यदि राजनीतिक दल पहचान और विकास दोनों को समाहित कर एक व्यापक एजेंडा प्रस्तुत कर पाते हैं, तो राज्य न केवल राजनीतिक स्थिरता प्राप्त करेगा, बल्कि सामाजिक प्रगति और आर्थिक विकास के नए आयाम भी गढ़ सकेगा। अन्यथा, बिहार पुनः जातिगत खांचों और विकास की कमी के द्वंद्व में फंसा रह सकता है। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बिहार की राजनीति का भविष्य पहचान और विकास के सहअस्तित्व पर टिका है। यही सहअस्तित्व उसे एक मजबूत लोकतांत्रिक परंपरा और संतुलित सामाजिक-आर्थिक विकास की दिशा में आगे ले जा सकता है।

7. सन्दर्भ ग्रंथ

- A. Nayar (2012) CONDITIONING CASH TRANFERS: BIHAR'S BICYCLE SCHEME, INTED2012 Proceedings, pp. 6580-6585.
- Bhaumik, S. K. (Ed.). (2024). Development with Justice: The Bihar Experience. Taylor & Francis.
- Express Web Desk (2020), RJD poll manifesto promises 10 lakh jobs, equal pay for equal work, Indian Express, October 24, 2020, Accessed from https://indianexpress.com/elections/rjd-poll-manifesto-promises-10-lakh-jobs-equal-pay-for-equal-work-6864112/
- Hasan, Z. (1998). *Politics and the State in India*. Sage Publications.
- Hasan, Z. (1998). *Politics and the State in India*. Sage Publications.
- Imam, M. A. (2024). Schemes and Policies for Marginalised Communities in Bihar: A Study of Nitish Government Tenure. Journal homepage: www. ijrpr. com ISSN, 2582, 7421.
- Jaffrelot, C. (2003). *India's Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India*. New Delhi: Permanent Black.

ISSN- 2583-8830

- Kumar, A. (2013). Development focus and electoral success at state level: Nitish Kumar as Bihar's leader. South Asia Research, 33(2), 101-121.
- Kumar, S. (2018). Post-mandal politics in Bihar: Changing electoral patterns (Vol. 1). SAGE Publishing India.
- Nandan, Aniket, R. Santhosh (2019); Exploring the changing forms of caste-violence: A study of Bhumihars in Bihar, India. European Journal of Cultural and Political Sociology, 6 (4): 421–447. doi: https://doi.org/10.1080/23254823.2019.1668282
- Prasad, Y. D. (2015). The Politics of Minority Votes in Bihar and 2014 Elections in India. New Horizons, 9(1), 141.
- Rai, H., & Pandey, J. (1981). State Politics in Bihar: A Crisis of Political Institutionalisation. The Indian Journal of Political Science, 42(4), 45-64.
- Sinha, A. (2011). Nitish Kumar and the rise of Bihar. Penguin Books India.
- Tewary, A. (2025), Just a few candidates for a population of 17.7%: Muslims still get short shrift, The Hindu, October 18. Accessed from https://www.thehindu.com/elections/bihar-assembly/no-proportional-representation-for-muslims-among-bihar-poll-candidates/article70175447.ece#google_vignette
- Tiwari, Dewendra Pratap (2025), Identity Politics and the Bihar Election 2025: Continuity, Conflict, and Changing Narratives, Mainstream, Vol 63 No 42, October 18, 2025. Accessed from https://mainstreamweekly.net/article16321.html

Corresponding Author:

राम शंकर
शोध छात्र,
विश्वविद्यालय राजनीति विज्ञान विभाग,
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।
Email: dpt_pol@yahoo.co.in